समुदाय व संरक्षण

समुदाय आधारित जैवविविधता संरक्षण तथा आजीविका सुरक्षा

समुद्री व तटीय क्षेत्रों पर विशेषांक

अंक ३, नं.२ अगस्त २०१०

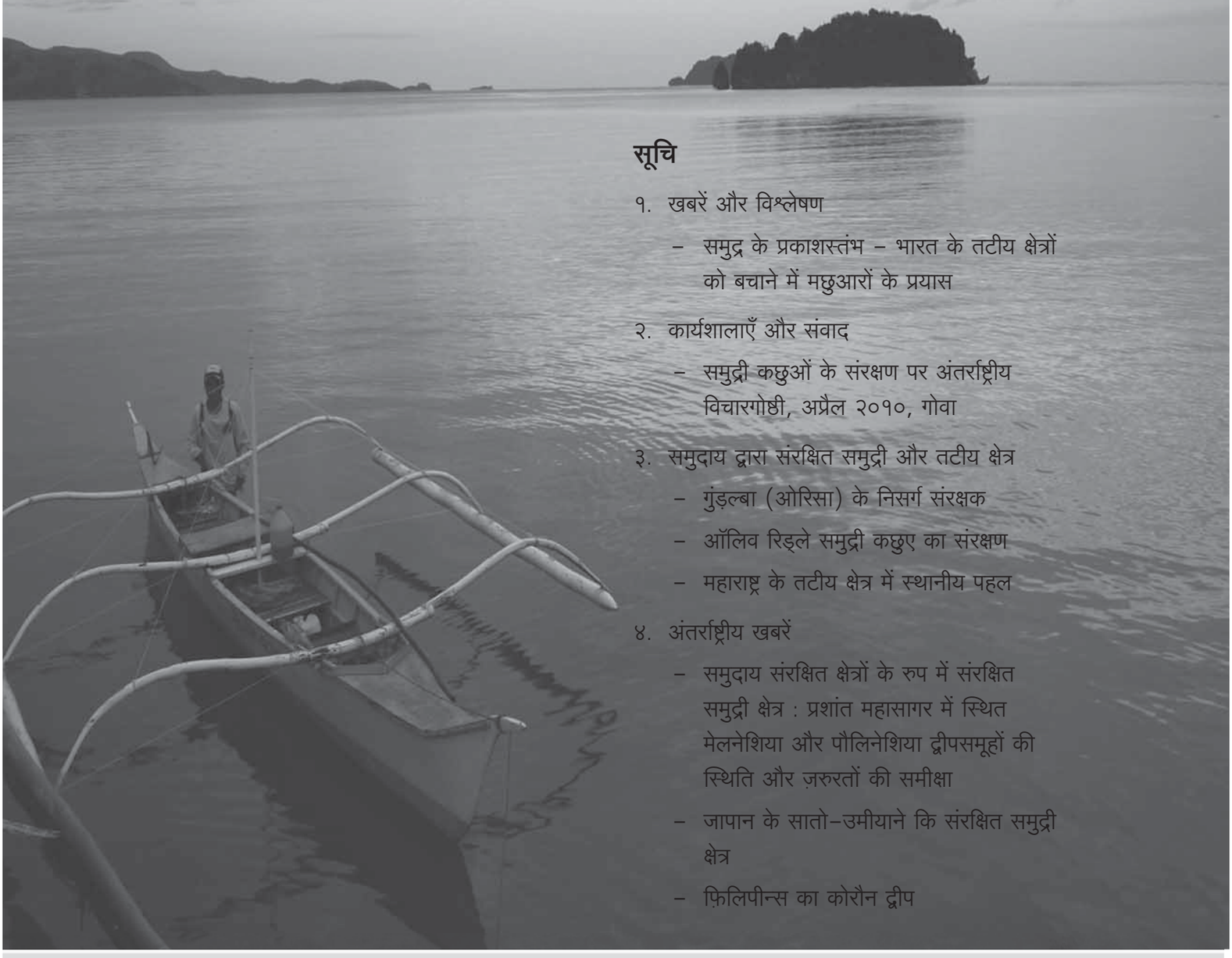

सूचि

१. खबरें और विश्लेषण
   - समुद्र के प्रकाशस्तंभ – भारत के तटीय क्षेत्रों को बचाने में मछुआरों के प्रयास

२. कार्यशालाएँ और संवाद
   - समुद्री कछुओं के संरक्षण पर अंतर्राष्ट्रीय विचारगोष्ठी, अप्रैल २०१०, गोवा

३. समुदाय द्वारा संरक्षित समुद्री और तटीय क्षेत्र
   - गुंड़ल्बा (ओरिसा) के निसर्ग संरक्षक
   - ऑलिव रिड्ले समुद्री कछुए का संरक्षण
   - महाराष्ट्र के तटीय क्षेत्र में स्थानीय पहल

४. अंतर्राष्ट्रीय खबरें
   - समुदाय संरक्षित क्षेत्रों के रुप में संरक्षित समुद्री क्षेत्र : प्रशांत महासागर में स्थित मेलनेशिया और पौलिनेशिया द्वीपसमूहों की स्थिति और ज़रुरतों की समीक्षा
   - जापान के सातो–उमीयाने कि संरक्षित समुद्री क्षेत्र
   - फ़िलिपीन्स का कोरौन द्वीप

संपादकीय

इस विशेष अंक का विषय है **समुद्री संरक्षण और आजीविकाएँ**।

पर्यावरण संतुलन के मुद्दों से जुड़े लोगों को मैक्सिको की खाड़ी में गहरे समुद्री सतह पर भारी मात्रा में तेल रिसाव की जानकारी होगी। यह रिसाव पेट्रोलियम उद्योग के इतिहास में अब तक का सबसे बड़ा समुद्री तेल रिसाव था। रिसाव समुद्र की सतह पर स्थित तेल के कुएँ से शुरु हुआ जिसके कारन अप्रैल २०, २०१० को खुदाई करने वाले उपकरण मे विस्फोट हुआ जिसमे प्लेटफार्म में काम करने वाले ११ कर्मचारियों की मृत्यु हो गई एवं १७ अन्य इस विस्फोट में घायल हो गयें। १५ जुलाई को तेल के कुएँ के रिसाव वाले भाग को बंद कर दिया गया परन्तु तब तक कुएँ से ४९ लाख बैरल तेल, ३५,००० से ६०,००० बैरल प्रतिदिन के हिसाब से रिसाव के द्वारा फैल चुका था। यह रिसाव पेट्रोलियम के जहरीलेपन एवं ऑक्सिजन की कमी आदि के कारण एक बड़े पर्यावरण आपदा में बदल चुका था जिसके कारण अमेरिका के ८ राष्ट्रीय उद्यानों पर संकट आ गया। तेल रिसाव के प्रभाव में आये हुए क्षेत्र में ८,००० से अधिक वनस्पति (पेड़-पौधे) एवं जीवों की प्रजातियाँ मौजूद थी। इस रिसाव का तुरंत प्रभाव लोगों की जीविका पर पड़ा जो मछली पालन एवं पर्यटन पर निर्भर थी। मई २४ को अमेरिकी सरकार ने अलबामा, मिसीसिपी एवं लुईज़ियाना राज्यों के लिए मत्स्य आपदा घोषित किया। आरंभिक अनुमान के तहत् मत्स्य उद्योग पर २५ लाख अरब ड़ालर का प्रभाव पड़ा। अमेरिका की यात्रा समिति (ट्रैवेल असोसियेशन) के अनुमान में इस रिसाव के कारण इस संपूर्ण तटीय क्षेत्र के पर्यटन पर पड़ने वाला आर्थिक प्रभाव अगले तीन वर्षो में २३ अरब ड़ालर का हो सकता है। यह तटीय क्षेत्र पर्यटन से जुड़ी ४,००,००० से अधिक नौकरियाँ उपलब्ध कराता है, एवं प्रतिवर्ष ३४ अरब ड़ालर का राजस्व (रेवन्यू) देता है।

मुम्बई के पास चित्रा और खलिजा-३ नाम के दो जहाजों के टकरा जाने के कारण ७ अगस्त २०१० को समुद्र में हादसा हुआ। चित्रा जहाज में २,६६२ टन तेल था, जो बहने लगा। साथ ही उस पर लदे १,२१९ कन्टेनरों में से ३५० पानी में गिर पड़े, जिसके कारण अन्य जहाजों की सुरक्षा को ख़तरा पैदा हुआ। वन एवं पर्यावरण मंत्री ने स्थिति को गंभीर बताया। ऊर्जा के मामले में खनिज तेल ईंधन पर आधारित अपनी अर्थव्यवस्था को चलाने के लिये आयात पर भारत की निर्भरता की मात्रा बढ़ती जा रही है। उधर लक्षद्वीप के कवराती द्वीप के पास मूँगे के पहाड़ों के क्षेत्र में जहाज के घुस जाने के कारण ४०० वर्ग मीटर क्षेत्र की हानी हुई। ऐसे क्षेत्रों की सुरक्षा का महत्व इसलिये बढ़ जाता हैं, क्योंकि यहाँ हुए छोटे से हादसे का अंजाम भी वहाँ के वातावरण पर कई सालों तक महसूस होता है।

महाराष्ट्र में 'सेज़' (अंग्रेजी में SEZ याने स्पेशल इकॉनॉमिक ज़ोन[1]) का विरोध बड़े ज़ोरों के साथ हो रहा है। फिर भी राज्य सरकार ने एक ऐसे नये 'सेज़' अधिनियम का प्रस्ताव रखा है, जो लोगों के अधिकारों को और भी कम करता है। इसके ज़रिये विकास करनेवाली हर कंपनी को २५ सालों तक टैक्स अदा करने से मुक्त किया जाएगा। तटीय क्षेत्रों को भी 'सेज़' अधिनियम की चपेट में लाया जाएगा। मुम्बई के गोराई गाँव के किनारे का १४,१८३ एकड़ों का प्रदेश एस्सेल ग्रुप को पर्यटन और मनोरंजन क्षेत्र बनाने के लिये दिया गया है। इस क्षेत्र को स्थापित करने के लिये यहाँ के सभी तटीय जंगलों को तोड़ दिया जाएगा। महाराष्ट्र भर में इसके विरोध में अनेक लोगों ने आवाज़ उठाई है।

धामरा बंदरगाह बनाए जाने के विरोध में १,५०,००० खत लिखे जाने के बावजूद भी ओरिसा में टाटा सन्स कंपनी यह बंदरगाह बनवा रही है। ऑलिव रिड्ले प्रजाति के कछुओं के प्रजनन पर और तटीय जंगलों पर इस बंदरगाह का भारी दुष्परिणाम पड़ेगा, यह जानते हुए भी इस बड़ी परियोजना को इस नाज़ुक पर्यावरणवाले क्षेत्र में बनवाया जा रहा है। १९९१ में तटीय क्षेत्रों के संरक्षण के लिये तटीय विनिमय ज़ोन अधिसूचना[2] को लाया गया था। पिछले १९ सालों में इस अधिसूचना (नोटिफ़िकेशन) को औद्योगिक हितों को ध्यान मे रखते हुए बार बार बदलकर कमज़ोर बनाया गया है। अधिनियम के प्रावधानों का कंपनियों द्वारा उल्लंघन किये जाने पर भी सरकार द्वारा कोई कार्रवाई नहीं की गयी। इस अधिनियम को अधिक कठोर बनाने की पर्यावरणवादिओं की और पर्यावरणीय शाश्वतता के बारे में कुछ समझ रखने वाले राजकीय नेताओं की अपील का भी कोई जवाब नहीं दिया गया है। सुना गया है कि इस से भी आगे जा कर सरकार ने भारत के तटीय क्षेत्रों में ३०० बंदरगाह बनवाने की योजना बनाई है। याने कि हर २५ कि.मी. की दूरी पर एक बंदरगाह होगा।

इन सब घटनाओं से यह अहसास हो सकता है कि भारत के तटीय क्षेत्रों में कुछ भी ठीक नहीं हो रहा है। परन्तु नहीं! समुदाय व संरक्षण के इस अंक में छपी हुई केस स्टड़ीज़ से स्पष्ट होता है कि मायूस होने के बजाय हम स्थानीय समाज और लोगों के द्वारा देश-विदेशों में बनाये गये **संरक्षित समुद्री क्षेत्रों** के उदाहरणों से प्रेरित हो कर निसर्ग संरक्षण कर सकते हैं।

एकता में

मिलिंन्द

---

१. विशेष आर्थिक ज़ोन - कानूनी मान्यता प्राप्त ऐसा क्षेत्र जहाँ आर्थिक क्रिया कलापो के साथ विदेशी पूँजी निवेश को बढ़ावा मिलेगा।

२. इस अधिसूचना के द्वारा तटीय क्षेत्र को तटीय विनिमय क्षेत्र के रुप में घोषित किया गया था एवं उक्त क्षेत्र में उद्योगों को स्थापित करने और उनके विस्तार एवं उनके संचालन की प्रक्रियाएँ निर्धारित की गयी थी।

१. खबरें और विश्लेषण

समुद्र के प्रकाशस्तंभ – भारत के तटीय क्षत्रों को बचाने में मछुआरों के प्रयास।

१९९० में चिले देश के मछुआरों के किसी नेता ने अंतर्राष्ट्रीय सभा में कहा था कि मछुआरे सागर के प्रकाशस्तंभ हैं।

१९७० से लेकर आज तक मछुआरों ने सागर में और तटीय क्षेत्र पर हो रहे बदलावों की ओर प्रकाशस्तंभों की तरह हमारा ध्यान आकर्षित किया है। सागर की परिसंस्थाओं पर हानिकारक प्रभाव ड़ालनेवाले ट्रॉलरों के खिलाफ़ जैसे वे आवाज़ उठा रहे थे, उसी प्रकार सागरी टापूओं का दर्जा घटाने वाली और प्रदूषण फ़ैलानेवाली विकास योजनाओं के खिलाफ़ भी वे आवाज़ उठा रहे हैं। सागर में और तटीय क्षेत्रों पर आनेवाले बदलावों की तरफ़ सागर से दूर रहनेवाले सारे भारत के लोगों का ध्यान आकर्षित करनेवालों में देश के मछुआरे आगे रहे हैं। इस में आश्चर्य की कोई बात नहीं है। आखिर सागरी संसाधनों पर ही तो उनकी आजीविकाएँ निर्भर होती हैं।

उनके संघर्षों को कभी सफ़लता मिली है, तो कभी नहीं भी मिली है। उदाहरण के तौर पर ट्रॉलिंग के विरोध में चलाये गये आन्दोलन सफ़ल रहे हैं। वैसे ही, अब हर तटीय राज्य में **समुद्री मत्स्य ग्रहण/मछली पकड़ना विनिमयन कानून**[३] बनाया गया है। तट के नज़दीक फ़ैले क्षेत्र में भी ट्रॉलर इस्तेमाल करने पर पाबंदी लगाई गई है। हालान्कि यह और बात है कि मत्स्य व्यवस्थापन के लिये बनाये गये प्रावधानों का कार्यान्वयन बहुत ही कमज़ोर रहा है।

१९९१ के **तटीय विनिमय ज़ोन अधिसूचना** की जगह २००८ में **तटीय प्रबंध ज़ोन**[४] का मसौदा सुझाव के रुप में लाया गया। परंतु समुदाय ये मानते हैं कि यह १९९१ की अधिसूचना को कमज़ोर बनाने के हेतु इसे लाया गया है। इस तरह तटीय प्रदेश में बड़े पैमाने पर विकास प्रक्रिया भी इसी के ज़रिये लायी जायेगी।

मछुआरों के अनुसार उद्योग, बुनियादी सुविधाएँ, पर्यटन, बंदरगाह, वगैरह के विकास से होनेवाली हानी से तटीय क्षेत्र का संरक्षण करने के लिये ज़्यादा विनियमन की, और अच्छे कार्यान्वयन की, जरुरत है। ऐसी परियोजनाएँ प्रदूषण बढ़ाती हैं और तटीय क्षेत्रों का विनाश करती हैं। इतना ही नहीं, कभी कभी तो परियोजनाओं के कारण पूरे समुदाय को परंपरागत क्षेत्र से विस्थापित होना पड़ता है। तटीय प्रबंध ज़ोन के मसौदे के विरोध में देश भर से आवाज़ उठाई गई। तटीय राज्यों में नॅशनल फ़िशवर्कर्स फ़ोरम ने ''मच्छीमार अधिकार'' राष्ट्रीय अभियान चलाकर तटीय प्रबंध ज़ोन को रद्द करने की माँग की। मछुआरों की संघटनाओं के साथ साथ पर्यावरणवादी समूहों ने भी विरोध जारी रखा जिसके कारण जुलाई २००९ में तटीय प्रबंध ज़ोन की अवधी को बीत जाने दिया।

अगस्त २००९ से फरवरी २०१० तक तटीय क्षेत्र के बारे में बुलाई गई कई जन सभाओं में मछुआरों के संघटनों ने तटीय विनिमय ज़ोन अधिसूचना १९९१ के प्रावधानों को बुलंद बनाने की, और तटीय क्षेत्र पर परंपरागत अधिकारों को स्थापित करने की माँगें की है।

तटीय जंगल और विकास

तटीय जंगल या मेंग्रोव में पायी जानेवाली प्रजातियों में से १५% प्रजातियाँ जल्दी ही हमेशा के लिये नष्ट या विलुप्त हो सकती हैं। इसका प्रमुख कारण है झींगों की पैदाइश के लिये काटे जा रहे तटीय जंगल। तटीय जंगल भारी मात्रा में कार्बन को अपने में समाविष्ट कर लेते हैं, और इसी कारण जलवायु परिवर्तन का शमन करने में ये क्षेत्र अत्यंत उपयुक्त होते हैं। परन्तु दुनिया भर में पर्यटन, खेल, खनिज तेल, शहर, वगैरह जैसे अनियंत्रित और अशाश्वत विकास कार्य के कारण यह क्षेत्र घटते जा रहे हैं। विश्व में हर साल १,५०,००० हेक्टेअर का तटीय जंगल क्षेत्र तबाह हो रहा है।

अप्रैल २०१० में पर्यावरण एवं वन मंत्रालय ने अपनी वेबसाइट पर उपलब्ध कराया हुआ तटीय विनिमय ज़ोन अधिसूचना २०१० का मसौदा यह स्पष्ट करता है कि मछुआरे समुदायों और पर्यावरणवादी समूहों की माँगे मानी नहीं गई हैं। इस बात को मंत्रालय तक पहुँचाया गया है, और फिर चर्चा के लिये माँग की गई है। अब देखना है कि मंत्रालय क्या कदम उठाएगा।

SEZ कानून और भारत के तटीय क्षेत्र

८ अगस्त २०१० को गोराई (मुम्बई), और आसपास के गाँवों ने गोराई की ओर जानेवाला रास्ता ९० मिनट तक जाम कर दिया। उनकी माँग महाराष्ट्र राज्य और केंद्र सरकार द्वारा SEZ के बारे में ज़ारी किये हुए अधिनियमों को रद्द कराने की थी। पिछले कुछ सालों से गोराई गाँव के लोग तटीय क्षेत्र में से १४,१८३ एकड़ क्षेत्र एस्सेल ग्रुप को पर्यटन व मनोरंजन सुविधाओं के विकास के लिये देने के विरोध में जूझ रहा है। यहाँ तटीय जंगल हैं, जिनको नष्ट किया जाएगा, और यहाँ पनपती मछलियाँ बच नहीं पायेंगी।

---

३. इस कानून का उद्देश्य मछली ग्रहण/पकड़ने के पारंपरिक एवं तकनीकी तरीकों के बीच संतुलन लाते हुएँ मछली पकड़ने की प्रक्रियाओं का वैज्ञानिक तरीके से विकास एवं नियंत्रण करना है।
४. इस अधिसूचना द्वारा प्राधिकरण का गठन कर तटीय पर्यावरण का संरक्षण एवं उसमें सुधार लाना एवं प्रदूषण के निवारण, उपशमन एवं नियंत्रण करना था।

महाराष्ट्र की विधान सभा में हाल ही में जो SEZ अधिनियम का मसौदा रखा गया, उस के बारे में लोगों को बड़ी चिंता हो रही है। इसके अंतर्गत इन 'कर–मुक्त' क्षेत्रों में विकसकों को कई प्रलोभन दिये जानेवाले हैं। जागतीकीकरण विरोधी समिती की उल्का महाजन के अनुसार निजीकरण को बढावा देने का यह एक गुप्त मार्ग है, जिस से विकसक अपने कार्यों के लिये किसी को जवाब दायक नहीं होगा।

नये अधिनियम में २५ साल के लिये विकसकों को कर मुक्तता मिलेगी। पानी और बिजली पर पूरा नियंत्रण विकसकों का होगा, और वे उनका मूल्य भी स्वयं तय करेंगे। मज़दूरों की सहायता के लिये देश में बनाये गये कानून SEZ में लागू नहीं होंगे। कोई स्थानीय निकाय SEZ पर नियंत्रण नहीं कर पायेगा।

यह एक विदारक और विड़ंबनात्मक बात है कि अपनी आजीविकाओं के लिए, तथा पर्यावरण के लिये हानिकारक विकास योजनाओं का विरोध करने में अहम भूमिका निभानेवाले मछुआरों को सागर तट के क्षेत्रों के संरक्षण के नाम पर भी तकलीफ़ किया जा रहा है।

एक तरफ़ गहिरमाथा अभयारण्य (ओरिसा), जम्बुद्वीप (सुंदरबन, पश्चिम बंगाल), और मुन्नार की खाड़ी का राष्ट्रीय उद्यान (तमिळनाडु) जैसे स्थानोंपर मछुआरों के अधिकारों का खंड़न किया जा रहा है, और दुसरी तरफ़ इन संरक्षित क्षेत्रों के बगल के क्षेत्रों में बंदरगाह, जहाजों के लिये समुद्री मार्ग, परमाणु ऊर्जा केंद्र, पर्यटन केंद्र, वगैरह बनाये जा रहे हैं।

टाटा द्वारा आलोचकों को धमकी, ग्रीनपीस पर मुकदमा चलाया जाएगा

टाटा सन्स कंपनी ने दिल्ली हाई कोर्ट में ग्रीनपीस पर बदनामी और ट्रेड़मार्क के उल्लंघन का दस करोड़ रुपयों का मुकदमा दर्ज किया है। टाटा स्टील की धामरा परियोजना के कारण नज़दीकी अभयारण्योंको और ऑलिव रिड्ले समुद्री कछुओं जैसी लुप्तप्राय प्रजातियों को हानि पहुंच रही है, इसकी ग्रीनपीस ने कड़े शब्दों में आलोचना कि है।

ग्रीनपीस इण्ड़िया के आशिष फ़र्नाण्ड़िस बताते हैं कि जनता की राय स्पष्ट है। १,५०,००० भारतीयों ने – (वैज्ञानिक, कछुओं के अभ्यासक, राजनेता और राष्ट्रीय स्तर पर कार्य करनेवाले कई NGO शामील हैं) इस बंदरगाह के विरोध में आवाज़ उठाई है। इस बात को नज़र–अंदाज़ करके टाटा दिखा रहे हैं कि उन का ध्यान केवल मुनाफ़े पर है, और उनकी दृष्टी में पर्यावरण के संरक्षण या शाश्वत परियोजन का कोई महत्व नहीं है।

भीतरकनिका और गहिरमाथा संरक्षित क्षेत्रों के नज़दीक होने के कारण वन्यजीव संशोधकों ने और अन्य समूहों ने ओरिसा में धामरा बंदरगाह बनाने का शुरु से (१९९०) ही विरोध किया है। भीतरकनिका में पाया जाने वाला विशाल तटीय जंगल देश में दूसरे स्थान पर है और देश के समुद्री मगरमछ का आखिरी गड़ है। लुप्तप्राय ऑलिव रिड्ले कछुओं का बड़ा जनन क्षेत्र भी गहिरमाथा में है। धामरा बंदरगाह भीतरकनिका राष्ट्रीय उद्यान से ५ कि.मी. से कम दूरी पर है, तथा गहिरमाथा समुद्री अभयारण्य की रेती से (जहाँ कछुए घोंसले बनाते हैं) १५ कि.मी. से कम दूरी पर है।

'जानकारी के अधिकार' कानून के ज़रिये प्राप्त की गयी जानकारी के अनुसार धामरा की बंदरगाह परियोजना १९८० के 'फ़ॉरेस्ट कॉन्ज़र्वेशन' अधिनियम का उल्लंघन करती है। सर्वोच्च न्यायालय में इस जानकारी पर आधारित मुकदमा दर्ज कराया गया है। २०१० में २० राजकीय नेताओं ने केंद्रीय पर्यावरण एवं वन मंत्री जयराम रमेश को लिखा है कि वे इस मामले में कुछ दखल दें। परंतु मंत्री महोदय ने अब तक कोई कदम नहीं उठाये हैं।

ऐसा सुनने में आया है कि देश के तटीय क्षेत्र में ३०० बंदरगाह बनवाने की परियोजना है। इन में से कई बंदरगाह तटीय जंगलों के पास, मछलियों के जननक्षेत्रों के नज़दीक, और समुद्री कछुओं तथा अन्य लुप्तप्राय प्रजातियों के अधिवासों के पास होंगे। 'तटीय विनिमय ज़ोन' अधिसूचना में इन क्षेत्रों को सर्वोच्च वर्ग में शामिल किया गया है।

२००९ साल में UPA सरकार ने और पर्यावरण मंत्री जयराम रमेश ने तटीय विनिमय ज़ोन अधिनियम को मज़बूत बनाने का, और उस के मूल उद्देश्य को बढ़ावा देने का आश्वासन दिया था। इस में तटीय क्षेत्रों का संरक्षण और मछुआरों की परंपरागत आजीविकाओं की रक्षा भी शामिल हैं। अब सरकार को अपने वादे पूरे करने का स्मरण कराने का समय आ चुका है!

स्रोत :

1. Tata sue NGO over turtle game, DNA, 18th July, 2010 http://www.dnaindia.com/money/report_tatas-sue-ngo-over-turtle-game_1411245
2. Wildlife activists move Supreme Court, The Times of India, 10th Oct, 2010 http://timesofindia.indiatimes.com/NEWS/City/Bhubaneswar/Wildlife-Activists-Move-Supreme-Court-/articleshow/5110555.cms.

समुद्र, समुद्र तट के जीवों व उन पर निर्भर आजीविकाओं को ख़तरा और समुद्री जोखीम का सामना

समुद्र की मछलियाँ पकड़कर लानेवाले भारत के मछुआरे बड़े कुशल होते हैं। पीढ़ियों से वे तटीय इलाके में मछलियाँ पकड़ रहे हैं। इस काम में जो नाव और औज़ारों का इस्तेमाल करते हैं, वे स्थानीय परिस्थितिकी के अनुसार विकसित हुए है। इन समाजों के लिये तटीय क्षेत्र जैसे उनका कार्यक्षेत्र है, उसी प्रकार उनकी जिन्दगी का भी अहम हिस्सा है। इस में सागर और ज़मीन, दोनों ही शामिल हैं। यह बात भी ध्यान देने लायक है कि मछुआरे समाजों का परंपरागत वास्तव्य तटीय इलाकों में होते हुए भी उन में से कई समुदायों के पास अपने रहने के और कार्य के क्षेत्रों पर स्वामित्व के या अन्य अधिकार जतानेवाले कोई कानूनी कागज़ात नहीं हैं।

मछुआरों के समुदाय, एक तरफ़ प्रदूषण, और समुद्र–तटीय क्षेत्र के घटते दर्जे के साथ मुकाबला कर रहे है, तो दुसरी तरफ़ विकास योजनाओं और निसर्ग–संरक्षण योजनाओं के बीच में फँसे जा रहे हैं। इस परिस्थिति में सुधार लाने के लिये ऐसे कदम उठाये जाने चाहिये, जिनके जरिये पर्यावरण की शाश्वतता बढ़े, और साथ ही मछुआरों की आजीविका व संस्कृति का भी ख़्याल रहे। मछुआरे समुदाय समुद्री जैवविविधता के संरक्षण में अहम भूमिका निभा सकते हैं, यह बात उपरोक्त अनुभवों ने साबित कर दी है। अब ज़रुरत यह है कि मछुआरे समुदायों के दृष्टिकोन को, और उनकी आजीविका की आवश्यकताओं को समुद्री व्यवस्थापन में और तटीय क्षेत्र के व्यवस्थापन और निर्णय–प्रक्रिया में शामिल किया जाये।

लेखिका : **चंद्रिका शर्मा** (icsf@icsf.net)

पता International Collective in Support of Fishworkers (ICSF),
27, College Road, Chennai – 600006, India.
http://icsf.net/icsf2006/jspFiles/icsfMain/

२. कार्यशालाएँ और संवाद

समुद्री कछुओं का संरक्षण – समुद्री कछुओं पर अंतर्राष्ट्रीय विचारगोष्ठी, अप्रैल २०१०, गोवा

'समुद्री कछुओं का जीवशास्त्र और संरक्षण' के विषय पर संशोधन करनेवालों का संगठन है 'इंटरनैशनल सी टर्टल सोसायटी' जो हर साल उपरोक्त विषय पर एक **विचारगोष्ठी** का आयोजन करती है। दक्षिण एशिया में भारी मात्रा में समुद्री कछुअे पाये जाते हैं। यहाँ इन कछुओं के संरक्षण और संशोधन में व्यस्त अनेक संस्थाएँ, समुदाय और व्यवस्थाएँ भी मौजूद हैं। ३० सालों के अपने इतिहास में पहली बार यह विचारगोष्ठी दक्षिण एशिया में आयोजित की गयी। २७ से २९ अप्रैल २०१० के दौरान पणजी, गोवा, की कला अकादमी में यह विचारगोष्ठी चली। इस के साथ २४ से ३० अप्रैल तक अनेक कार्यशालाएँ, तथा क्षेत्रीय और विषयगत सभाएँ भी यहाँ संपन्न हुई।

इस साल की विचारगोष्ठी का विषय 'समुद्री कछुओं की दुनिया' था। तटीय क्षेत्र, तट–समीप क्षेत्र और गहरे समुद्र में स्थित परिसंस्थाएँ, जहाँ समुद्री कछुए रहा करते हैं, इन सभी क्षेत्रों की पर्यावरणीय स्थिति और अन्य मुद्दों पर चर्चाएँ हुई। विचारगोष्ठी का एक उद्देश्य यह भी रहा, कि तटीय मछुआरों सहित जो भी समुदाय समुद्री कछुओं पर परस्पर प्रभाव ड़ालते हैं, उन पर ध्यान दिया जाए।

समुद्री कछुओं के विषय में १२५ लोगों ने मौखिक प्रस्तुति की, और २५० व्यक्तियों ने पोस्टर प्रस्तुत किये। इस विचारगोष्ठी में दो 'विशेष' सभाएँ भी संपन्न हुई : (२५ अप्रैल को फ़िशरीज फ़ोरम और २६ अप्रैल को दक्षिण एशियाई छोटी विचारगोष्ठी)। मत्स्यक्षेत्र और निसर्ग–संरक्षण में परस्पर क्रिया के आयामों की ओर 'फ़िशरीज फ़ोरम' ने ध्यान आकर्षित किया। आदान प्रदान की क्रिया संपन्न की गई। विविध दक्षिण एशियाई मत्स्यक्षेत्रों की सांस्कृतिक विभिन्नता और बहुविधता के बारे में भी लोगों में जागरुकता स्थापित हुई। फ़ोरम में, समुद्री कछुओं में दिलचस्पी लेनेवाले समूहों, और मत्स्यक्षेत्र में दिलचस्पी रखनेवाले समूहों में विचारों का आदान–प्रदान हुआ। कई बार इन समूहों के दिलचस्पी के विषय एक दूसरे के साथ मिलते जुलते रहे। इस से एक लाभ हुआ कि फ़ोरम में मछुआरों की परिस्थिति की ओर निसर्ग संरक्षक समूह का ध्यान आकर्षित किया गया। परंपरागत मछुआरों के तटीय क्षेत्र पर अधिकार और निसर्ग संरक्षण के बारे में उनके मन में उठे सवालों पर (जैसे कि आजीविका के लिये जिन परिसंस्थाओं पर वे निर्भर हैं, उनका संरक्षण करने के कारण मछुआरों को वहाँ प्रवेश न देना) भी ध्यान केंद्रित किया गया।

मछुआरे और मत्स्यक्षेत्र में कार्यरत अन्य व्यक्तिओं की यूनियनों और कछुओं के संरक्षकों के बीच होनेवाले संघर्षों के पहलुओं पर भी चर्चाएँ हुई। इसका अच्छा नतीजा यह हुआ, कि समूहों ने स्थानीय समुदायों के साथ इस विचारगोष्ठी के बाद भी वार्तालाप जारी रखने का निर्णय लिया।

'संरक्षण कार्य जुड़ा हुआ और समन्वयपूर्ण हो,' इस उद्देश्य को हासिल करने के लिये दक्षिण एशियाई छोटी विचारगोष्ठी का आयोजन किया गया। इसमें भारत, बांग्लादेश, मालदिव, श्रीलंका और पाकिस्तान के अधिकार धारी और निसर्ग संरक्षण समूहों के और संशोधन संस्थाओं के प्रतिनिधि इकट्ठा हुए।

तटीय क्षेत्र में बड़े पैमाने पर किये जा रहे विकास कार्य पर गंभीर चिंता जतानेवाली याचिका कुछ व्यक्तियों ने और संस्थाओं ने मिल कर केंद्रीय पर्यावरण एवं वन मंत्री जयराम रमेश को पेश की है। पर्यावरण के लिये बहुत महत्व रखनेवाले इलाकों के नज़दीक बनायी जा रही ये परियोजनाएँ उन्हे ख़तरे में ड़ालती हैं। इसलिये इन क्षेत्रों की रक्षा के लिये आवश्यक कानूनी व्यवस्था की माँग इस याचिका द्वारा की गई है। समुद्री कछुओं के सामुहिक घोसलों वाले क्षेत्रों, से तथा उनके लिये महत्वपूर्ण अन्य क्षेत्र, जैसे उनके चरने का क्षेत्र, उनके प्रवास का क्षेत्र, २५ कि.मी. की दूरी तक बंदरगाह बनाने न देने की माँग भी इस याचिका में शामिल की गई है। ओरिसा के सामुहिक घोंसलोंवाले क्षेत्र से कम से कम १० कि.मी. की दूरी तक कोई भी विकास योजना बनाने न देने की माँग भी याचिका में शामिल की गई है। विचारगोष्ठी में हाज़िर रहे ३०० से अधिक सहभागी सदस्यों ने याचिका पर दस्तखत किये हैं।

मुम्बई के पास सागर में तेल गिरने से पकड़ी जानेवाली मछलियों की संख्या में गिरावट की चिंता

मुम्बई के किनारे के पास 'चित्रा' और 'खलीजा-३' नाम के दो व्यापारी जहाज़ ७ अगस्त २०१० को आपस में टकराए, और इसी कारण बहने लगे तेल से मछलियों को ख़तरा हुआ। करीबन ८७९ मेट्रिक टन तेल बह गया। कोलाबा, उरण, माण्ड्वा और रेवस के पास फैले तेल के पटल को देखकर अधिकारी भी चिंतित हो गये, क्योंकि चित्रा जहाज़ पर लदे ५१२ 'कंटनरों' में से ३७ 'कंटनरों' में विपत्तिकारक रसायन तथा कीटनाशक थे। मुम्बई के तटीय क्षेत्र के पास फैले तेल के पटल के कारण गंभीर पर्यावरणीय और सुरक्षा-विषयक समस्याएँ उठी हैं। महाराष्ट्र राज्य के पर्यावरण मंत्री ने कहा है कि अगर कीटनाशक उतारे गये, तो बड़ी गंभीर मुसीबत आ जायेगी।

मुम्बई के आस-पास के १०० कि.मी. के सागरी क्षेत्र में मौजूद पौधे और प्राणि अब ख़तरे में हैं। पर्यावरणवादी कहते है कि अगर यह तेल अलिबाग तक पहुँचा, तो वहाँ पर स्थित तटीय जंगल को वह तबाह कर सकता है। तटीय जंगल मछलियों के जननक्षेत्र होते हैं। 'बॉम्बे नॅचुरल हिस्टरी सोसायटी' संस्था के सहायक निदेशक दीपक आपटे ने कहा है कि 'समुद्री जीवों के बारे में चिंता के अलावा वैज्ञानिकों को यह चिंता भी हो रही है, कि अगर तेल की परत प्रकाश को पानी की सतह से नीचे जाने से रोक लेगी, तो प्रकाश-संश्लेषण नहीं हो पायेगा। सतह पर तैरनेवाले पौधे विकसित नहीं हो पाएँगे'। यह चेतावनी दी है 'सेंट्रल इन्स्टिट्यूट ओफ़ फ़िशरीज एज्युकेशन' संस्था के सी. एस. पुरुषोत्तम ने। पर्यावरण एवं वन मंत्री ने खुद कहा है कि तटीय जंगल को काफ़ी नुकसान पहुँचा है।

नैशनल फ़िश फ़ोरम के रामभाऊ पाटील के अनुसार 'अब खुले समुद्र की सतह पर रहनेवाले जीव ख़तरे में हैं। जुलाई-अगस्त में नन्ही मछलियाँ तेल के कारण मर सकती हैं। ट्रॉलर इस्तेमाल करके मछलियाँ पकड़ने पर मानसून में लगी पाबंदी को और कड़ा कर देना चाहिये, ताकि जहरीली मछलियाँ बाज़ार में बेची न जाएँ।' समुद्र में तेल के गिरने से आजीविकाओं को नुकसान तो पहुँचा है। फिर भी किसी ने मुआवज़े की बात नहीं की है।

इस साल की विचारगोष्ठी का एक उद्देश्य यह भी था, कि दक्षिण एशियाई क्षेत्र के ज़्यादा से ज़्यादा लोग इस में सहभागी हों। और इसे पूरा भी किया गया – २५० भारतीय लोगों के साथ साथ विचारगोष्ठी में श्रीलंका, म्यानमार, बांग्लादेश और पाकिस्तान से ५३ लोग सहभागी हुए।

नोट: ऊपर दी गई जानकारी 'दक्षिण फ़ाउंड़ेशन' संस्था के कार्तिक शंकर और सीमा शेणॉय (kartik@ces.lisc.ernet.in व seemashenoy83@gmail.com) के लिखे रिपोर्ट "Report: International Sea Turtle Symposium, April 2010, Goa" का अंश है।

भारत में समुद्र-तट के संरक्षण के लिये बनी कानूनी व्यवस्था की सीमाएँ

'सेंटर फॉर इकॉलॉजिकल साइन्स' संस्था के प्रा. कार्तिक शंकर ने अपने लेख में – Deconstructing Sea Turtle Conservation in India' में – यह निरीक्षण नोट किया है कि, भारत में निसर्ग संरक्षण को स्थलीय मापदंड़ों में सीमित किया गया है। मसलन, समुद्री संरक्षण के बारे में एक भी लेख हमारी संरक्षण नीति और कार्यप्रणालि में उपलब्ध नहीं है। राष्ट्रीय नीति में राष्ट्रीय उद्यानों और अभयारण्यों पर ही हमेशा जोर दिया जाता है। यह नीति ज़मीन पर निसर्ग संरक्षण कराने में कुछ हद तक सफ़ल जरुर रही है, लेकिन अधिक व्यापक स्तर पर समुद्री संरक्षण में यह क्या योगदान दे पायेगी, यह अनिश्चित बात है। भारत के सारे तटीय क्षेत्रों में भारी संख्या में आबादी होने के कारण, और तटीय समुद्री क्षेत्रों को समुदायों द्वारा भारी मात्रा में उपयोग में लाये जाने के कारण ऐसा लगता है कि स्थलीय निसर्ग-संरक्षण में इस्तेमाल किया गया, सब को संरक्षित क्षेत्र से बाहर रखने का, आदर्श समुद्री क्षेत्र में काम नहीं कर पायेगा। परन्तु इस बात का यह परिणाम नहीं हुआ है, कि समुद्री क्षेत्र में लोगों सहित, सहभागिता पर आधारित पद्धति का समुद्री संरक्षण का दृष्टिकोण अपनाया जाए। उसके विपरित दूसरी ओर बहुत से राज्यों में जो अधिनियम, पारंपरिक मछुआरों की सुरक्षा के लिये बनाये गये, लगता है कि वही निसर्ग संरक्षण कानून की जगह कार्यरत हैं, और कुछ लुप्तप्राय रीढ़दार (vertebrates) प्राणियों को बचाये रखने में सहायक साबित हुए हैं।

गैर सरकारी संस्थाओं द्वारा संरक्षण व स्थानिक आजीविकाओं से सहयोग के प्रयास

भारत के तटीय क्षेत्र में निसर्ग संरक्षण के कार्य करनेवाले और कछुओं के संरक्षण के लिये, और उनके आधिवासों को बचाने के लिये कई NGO प्रयास कर रहे हैं। दुनिया में पायी जानेवाली समुद्री कछुओं की सात प्रजातियों में से पांच किस्मों के कछुअे भारत के तटीय क्षेत्रों व समुद्र में पाये जाते हैं। इनमें कम से कम चार प्रजातियों के कछुअे यहाँ पर भारी मात्रा में अण्ड़े देते हैं।

कछुओं की सारी प्रजातियाँ वन्यजीव संरक्षण अधिनियम की अनुसूचि १ में शामिल हैं और अत्याधिक संरक्षित प्रजातियों में से हैं। परन्तु देश के पूरे तटीय क्षेत्र में समुद्री कछुए विलुप्ति के ख़तरे में हैं। अनियोजित विकास कार्य से, मत्स्यक्षेत्र में होनेवाली प्रासंगिक शिकार से, व ऐसे ही अन्य कारणों से समुद्री कछुओं की जान ख़तरे में पड़ रही है। विशेष कर ओरिसा में पिछले दस सालों में मछलियों के साथ पकड़े जाने से करिबन १,००,००० से ज़्यादा संख्या में ऑलिव रिड्ले कछुअे डूब कर मर गये थे।

समुद्री कछुओं की रक्षा करने के लिये अनेक कारकों को सम्मीलित करना पड़ता है। यह बहुत महत्वपूर्ण बात है कि एजेन्सियों और लाभधारकों में सहकार्य हो, और जिन राज्यों में

कछुओं के आधिवास हैं, उनमें सहयोग हो। तभी कछुए सालों तक बच सकेंगे और साथ ही उनके आधिवास से मिलनेवाले नैसर्गिक संसाधनों का शाश्वत उपयोग किया जा सकेगा।

जनवरी २००९ में देश के विभिन्न विभागों से आयी २० संस्थाएँ चेन्नई में आयोजित एक कार्यशाला में मिली, और उन्हों ने समुद्री कछुओं के बारे में, और उनके आधिवासों का संरक्षण करने के बारे में अध्ययन की शुरुआत की। इस प्रकार 'टर्टल ॲक्शन ग्रुप' याने 'समुद्री कछुआ कृति समूह' की स्थापना हुई। इस समूह ने देश भर में समुद्री कछुओं की सुरक्षा के लिये और हर एक सहभागी संस्था के उद्देश्यों को आगे बढ़ाने के लिये कुछ लक्ष्य तय किये हैं। अब इस कृति समूह की २५ से ज़्यादा सदस्य संस्थाएँ हैं, और वे अधिक संशोधन में और निगराणी व्यवस्था का विकास कराने में व्यस्त हैं। इनके द्वारा प्रशिक्षण का और कार्यशालाओं का आयोजन भी किया जाता है। अधिक जानकारी के लिए इंटरनेट पर देखिये : www.seaturtlesofindia.org/tag

नोट: 'दक्षिण फ़ाउंड़ेशन' की सीमा शेणॉय (seemashenoy83@gmail.com) के एक लेख – "Creating collaborations for effective sea turtle conservation in India" – का यह अंश है।

३. समुदाय द्वारा संरक्षित समुद्री और तटीय क्षेत्र

गुंड़ल्बा (ओरिसा) के निसर्ग संरक्षक

सुकांति दी, जो गुंड़ल्बा गाँव की 'पीर जहानिया जंगल सुरख्या महिला समिति' की सचिव हैं, जब १९९९ में आये **प्रलयंकर** बलशाली चक्रवात के प्रभाव का वर्णन करती हैं, तो उनके आँसू बहने लगते हैं। फिर भी गुंड़ल्बा गाँव ने सात पड़ोसी गाँवों के साथ परिस्थिति का ड़ट के सामना करते हुए तटीय प्रदेश में अब तक १५ वर्ग कि.मी. के क्षेत्र पर 'कैजुरिना' पेड़ो को और ५ वर्ग कि. मी. क्षेत्र पर तटीय जंगल को सुरक्षित रखा है।

ओरिसा की राजधानी भूबनेस्वर से ६० कि.मी. की दूरी पर पुरी ज़िले में स्थित देवी नदी के मुख के क्षेत्र का बड़ा पर्यावरणीय, ऐतिहासिक और आर्थिक महत्व है। ३६ गाँवों में बसे १५,००० परंपरागत मछुआरे अपनी रोज़ी–रोटी के लिये नदी के इस मुहाना क्षेत्र पर **आश्रित** हैं। यही क्षेत्र 'ऑलिव रिड्ले समुद्री कछुओं का महत्वपूर्ण जनन क्षेत्र भी है। 'ऑलिव रिड्ले' समुद्री कछुए देवी नदी के मुहाना क्षेत्र में अपने घोंसले बनाना पसंद करते हैं। प्रशांत महासागर और हिन्द महासागर में पायी जानेवाली ड़ौलफ़िन और अन्य **स्तनधारी** जानवरों की प्रजातियाँ भी बड़ी संख्या में इस नदी के मुख के पास दिखाई देती हैं। यहाँ अच्छे तटीय जंगल भी मौजूद हैं। १९८५ में २.५८ वर्ग कि.मी. का जंगल क्षेत्र १९९९ तक घटकर १.९९९ वर्ग कि. मी. हो गया था। ओरिसा के तटीय क्षेत्रों में जंगल को बचाना बहुत महत्व रखता है, क्योंकि यहाँ चक्रवातों का, तुफ़ान में उठनेवाले हिलोरों का, और बाढ़ का हमेशा ख़तरा रहता है।

१९९९ के चक्रवात में समुद्र तट पर खड़े सारे पेड़–पौधे चौपट हो जाने के कारण खेतों की मिट्टी ख़ारी बन गई थी। इसी कारण यहाँ खेत उपजाऊ नहीं रहे। नमक की मात्रा बढ़ने के कारण उस साल फ़सल में भारी गिरावट आई। समुद्र के नमकीन पानी से खेतों को बचाकर उन्हें उपजाऊ बनाने के लिये 'कैजुरिना' पेड़ों को और तटीय जंगल को बचाने की सख्त ज़रूरत को गाँव के लोग समझ गये। तूफ़ान के कारण हुए नुकसान को देखकर लोग समझ गये कि ऐसे जंगल को बचाने से गाँव को तूफ़ान से बचाया जायेगा और रोज़ी–रोटी की सुरक्षा भी होगी।

'कैजुरिना' पेड़ों के बारे में दूसरा दृष्टीकोण

'कैजुरिना' एक विदेशी किस्म का पेड़ है। तटीय क्षेत्र पर होनेवाले उसके हानिकारक परिणामों के बारे में जानकारी उपलब्ध है। कुछ लोगों का अनुभव है कि इन पेड़ों के कारण मिट्टी का कटाव बढ़ जाता है। वाईल्ड़ लाईफ इन्स्टिट्यूट ऑफ इंड़िया के संशोधक बिवाश पांड़व ने १९९९ के बलशाली चक्रवात के परिणामों के बारे में किये हुए संशोधन का ज़िक्र करते हुए प्रा. कार्तिक शंकर कहते हैं कि तट पर खड़े कैजुरिना के पेड़ों के बावजूद भी सटे हुए क्षेत्र का पर्याप्त मात्रा में संरक्षण नहीं हो पाया। यह भी अनुभव हुआ है कि तटीय क्षेत्र की ढाल में और चौड़ाई में इन पेड़ों के कारण बदलाव आया है। अन्य पौधों पर भी उनका बुरा असर होता है। कछुओं के अंड़ों को खानेवाले सियार जैसे जानवरों को आश्रय दे कर कैजुरिना के पेड़ और भी हानिकारक साबित हो सकते हैं।

तटीय क्षेत्र के पेड़–पौधों की और तटीय परिसंस्था की सुरक्षा के लिये गुंड़ल्बा गाँव ने 'पीर जहानिया सुरख्या महिला समिति' बनाकर तटीय क्षेत्र के गाँवों के लिये एक आदर्श की स्थापना की। समुद्री कछुओं के जनन की ऋतु में उनकी सुरक्षा करने के लिये ग्रामयुवकों ने भी समूह बना लिये हैं। समिति ने एक अभ्यास केंद्र भी बनाया है, और अब तो कछुओं के जनन की ऋतु (नवंबर–दिसंबर) में पर्यटन द्वारा कुछ आमदनी कमाने की कोशिश भी की जा रही है। जनन ऋतु में कछुओं की सुरक्षा के लिये अन्य प्रयासों के साथ–साथ मछलियाँ पकड़ने पर भी कुछ पाबंदियाँ लगाई जाती हैं, ताकि समुद्र में भी कछुअे सुरक्षित रहें।

जंगल बचाने में स्थानीय लोगों की प्रतिबद्धता के परिणाम अब दिखाई देने लगे हैं। जंगल फिर पनपने लगे हैं। जंगल क्षेत्र, जो

१९८५ में २.५८ वर्ग.कि.मी. था, ६३% बढ़कर २००५ में ४.२१ वर्ग.कि.मी. तक फैल गया। जंगल में कई प्रजातियों के पंछी दिखाई देने लगे हैं, और उनके कारण पर्यटकों की संख्या भी बढ़ गई है। तटीय जंगल में मछलियों के महत्वपूर्ण जनन क्षेत्र मौजूद हैं।

लेखिका : **स्वेता मिश्रा** (swetamishra1@gmail.com)
पता : A-70, सहीद नगर, भूबनेस्वर–751007 ओरिसा
वेबसाइट : www.vasundharaorissa.org

ऑलिव रिड्ले समुद्री कछुए का संरक्षण – महाराष्ट्र के तटीय क्षेत्र में स्थानीय पहल

२००२ में 'सह्याद्री निसर्ग मित्र' संस्था के विजय महाबले जब सफ़ेद पेटवाले समुद्री अकावों का सर्वेक्षण कर रहे थे, तब उन्हों ने कोकण (महाराष्ट्र) के वेलास गाँव के समुद्र तट पर बिखरे फूटे हुए अंड़ो के फ़ोटो खींचे थे। उसी संस्था के संस्थापक भाऊ काटदरे को स्थानीय लोगों के साथ बातचीत कर के पता चला कि वे वहाँ की रेत में घोंसले बनाने आनेवाले ऑलिव रिड्ले कछुओं के अंड़े हैं। (वेलास के तट को मुंबई में चित्रा जहाज़ की दुर्घटना के बाद बहे हुए तेल से ख़तरा है।)

पश्चिम किनारे पर स्थित वेलास गाँव महाराष्ट्र के मुख्य शहरों से दूर है। सह्याद्री निसर्ग मित्र संस्था के सदस्यों को तट पर चक्कर लगाते हुए दिखाई दिया कि स्थानीय लोग कछुओं के अंड़े उठाकर ले जाते थे। गाँव के कुत्ते और अन्य शिकारी जानवर भी अंड़े खतम करते थे। इतना ही नहीं, कछुओं का भी शिकार किया जाता था। साथ–साथ तटीय क्षेत्र के विनाश, और ट्रॉलर द्वारा मछलियाँ पकड़ने के कारण भी ऑलिव रिड्ले समुद्री कछुओं की संख्या घटती जा रही थी। इन्ही कारणों की वजह से 'सह्याद्री निसर्ग मित्र' ने इस प्रजाति का संरक्षण करने की ठान ली। उन्हें यह अहसास भी था कि यह कार्य स्थानीय लोगों के सहभाग के साथ ही किया जा सकता है। स्थानीय लोगों के लिये समुद्री कछुआ आमदनी के साधन के साथ–साथ भोजन का एक भाग भी था, इसलिये कछुअे का संरक्षण कोई आसान बात नहीं थी। सह्याद्री निसर्ग मित्र ने इस प्रश्न को सुलझाने के लिये जन सभाएँ, प्रदर्शनियाँ, व्याख्यान, स्लाइड़–शो वगैरह का आयोजन किया।

वेलास के समुद्र तट पर अंड़ो की रक्षा करने के लिये एक 'हैचरी' (अंड़े सेनेवाला केंद्र) स्थापित किया गया। संस्था के सदस्य वेलास के ३ कि.मी. लंबे तटीय क्षेत्र पर कछुओं के घोंसले बनाने की ऋतु में उनके संरक्षण के लिये हमेशा चक्कर लगाने लगे। अंड़ों को उठाकर हैचरी में रखा गया, और उनमें से बच्चे निकलने पर उन्हे समुद्र में छोड़ा गया। पहले साल में सह्याद्री निसर्ग मित्र ने ५० घोंसलों से मिले अंड़ों को बचाया और २,७३४ नवजात बच्चों को समुद्र में छोड़ा। स्थानीय लोगों का सहयोग भी धीरे धीरे मिलने लगा। फिर सह्याद्री निसर्ग मित्र ने कछुओं के संरक्षण का यह कार्य महाराष्ट्र के हर तटीय क्षेत्र तक बढ़ा दिया। अब तक कुल २६,००० नवजात कछुओं को समुद्र में छोड़ा जा चुका है। २००७ से वेलास में सालाना कछुआ समारोह (Turtle Festival) आयोजित किया जाने लगा। यहाँ आने वाले पर्यटकों को भी सह्याद्री निसर्ग मित्र के कार्यकर्ता कछुओं के नवजात बच्चे दिखाते हैं। पर्यटकों के रहने का इंतजाम करने से स्थानीय लोगों को आमदनी भी बढ़ रही है। स्थानीय लोग अब समझ गये हैं कि कछुओं के जीवन पर पर्यटन व्यवसाय निर्भर है, और पर्यटकों पर स्थानीय लोगों की आमदनी निर्भर है।

पिछले साल २००९ में वेलास के सह्याद्री निसर्ग मित्र ने 'कासव मित्र मंड़ल' की स्थापना कराई। अब यह संस्था उचित दामों में पर्यटकों के लिये रहने की और भोजन की सुविधा उपलब्ध कराती है। इससे मिली आमदनी का दसवाँ हिस्सा कछुआ संरक्षण निधि को दिया जाता है। वेलास में कछुओं की सुरक्षा के लिये इस निधि का उपयोग किया जाता है। कछुअे के संरक्षण द्वारा आजीविका चलाने का वेलास का यह उदाहरण शायद देश की पहली मिसाल है।

लेखक : **भाऊ काटदरे** (snmcpn@rediffmail.com) १९९२ में स्थापित की गई सह्याद्री निसर्ग मित्र संस्था के संस्थापक और सचिव हैं (www.snmcpn.org)। उन्हों ने २००८ का Sanctuary/RBS Service award पाया था।

४. अंतर्राष्ट्रीय खबरें

समुदाय संरक्षित क्षेत्रों के रूप में संरक्षित समुद्री क्षेत्र : प्रशांत महासागर में स्थित मेलनेशिया और पौलिनेशिया द्वीपसमूहों की स्थिति और ज़रुरतों की समीक्षा

दुनिया में संरक्षित समुद्री क्षेत्रों का महत्व बढ़ रहा है। 'शाश्वत विकास' विषय पर २००२ में संपन्न हुई एक अंतर्राष्ट्रीय सभा में घोषणा की गई, कि २०१२ तक जागतिक स्तर पर संरक्षित समुद्री क्षेत्रों की स्थापना करने की आवश्यकता है। अन्य अंतर्राष्ट्रीय सभाओं ने, जैसे कि **जैवविविधता कन्वेन्शन** के सहभागियों (पार्टीज़) ने भी इसी बात को दोहराया है। **अंतर्राष्ट्रीय प्राकृतिक संरक्षण संघ** (इंटर्नॅशनल युनियन फॉर कॉन्ज़र्वेशन ऑफ नेचर याने आइ. यू. सी. एन[५]) मे एक समुद्री संरक्षण क्षेत्र को इस प्रकार परिभाषित किया है कि – समुद्री संरक्षण क्षेत्र (मरीन प्रोटेक्टेड़ एरियाज़ –

५. यह संघ पर्यावरण एवं विकास से जुड़ी महत्वपूर्ण चुनौतियों के व्यवहारिक समाधान ख़ोजने में विश्व की मदद करता है।

एम.पी.ए. (MPA)) – 'ऐसा भू–भाग जो मध्य ज्वारीय या उप ज्वारीय क्षेत्र हो, जिसमे पानी रहता हो जिसमे वनस्पतियाँ एवं जीव–जन्तु हों, जिसकी ऐतिहासिक एवं सांस्कृतिक विशेषताएँ हो, जिसे कानून द्वारा आरक्षित किया गया हो या किसी दूसरे प्रभावी तरीकों द्वारा किसी हिस्से या संपूर्ण पर्यावरण का संरक्षण हो'।

मेलनेशिया और पौलिनेशिया में पिछले दशक में संरक्षित समुद्री क्षेत्रों की संख्या काफ़ी बढ़ गई है। इस का कारण है हाल ही में समुदायों द्वारा संरक्षित क्षेत्रों को मिली हुई मान्यता। इस क्षेत्र में पारंपरिक अधिकारों की एक विशेष व्यवस्था रही है जिसके कारण विभिन्न समुदाय अपने आसपास के संसाधनों के विषय में निर्णय लेने व उनके निर्वाजन करने की एक खास पद्धति इस्तेमाल करते हैं। ५०० से ज़्यादा **समुदायों द्वारा संरक्षित क्षेत्र** यहाँ पर १२,००० वर्ग.कि.मी. पर फैले हुए हैं, जिन में से १,००० वर्ग.कि.मी. क्षेत्र में मछलियाँ पकड़ने पर पाबंदी है।

मेलनेशिया में फ़ीजी द्वीपसमूह का वुएती नावाकावू समुद्री क्षेत्र, जो स्थानीय व्यवस्थापन में संरक्षित किया गया है

फ़ीजी देश के प्रमुख द्वीप 'वीटी लेवू' पर राजधानी सुवा से नावाकावू समुद्री क्षेत्र दूर नहीं है। वहाँ के चार गाँवों में बसे हुए नावाकावू जनजाति के कुल ६०० लोगों ने २००२ में स्थानीय व्यवस्थापन के साथ इस क्षेत्र का संरक्षण आरम्भ किया। दक्षिणी प्रशांत महासागर के विद्यापीठ के प्रायोगिक विज्ञान संस्थान की सहायता के साथ नावाकावू समुदाय ने अपने क्षेत्र में मछलियाँ पकड़ने पर पाबंदी लगाई, और उससे चौड़े समुद्री क्षेत्र में पारंपरिक व्यवस्थापन के साथ संरक्षण देना शुरु किया। व्यवस्थापन समिति का कार्य इस जनजाति के प्रमुखों की सभा द्वारा नियंत्रित करते है। नियमों का पालन हो, यह देखने के लिये 'मानद मछली रक्षक' (वार्डन) पारंपरिक तरीकों के आधार पर काम करते हैं। यहाँ सरकारी कानूनों का सहारा नहीं लिया जाता है। संरक्षण करने से मछलियों की संख्या बढ़ गई है, और आमदनी में भी वृद्धि हुई है। इसके अलावा वुएती नावाकावू समुदाय ने पारंपरिक व्यवस्था का एक आदर्श सामने रखा है, जिसमें आनेवाली पीढ़ियों के लिये संसाधनों को संरक्षित किया जाता है।

मेलनेशिया और पौलिनेशिया के समुदायों द्वारा संरक्षित क्षेत्रों की विशेषताएँ इस प्रकार हैं :

* **सीमाएँ** : हालाँकी कभी कभी पूरे समुद्री क्षेत्र का व्यवस्थापन किया जाता है, लेकिन ज़्यादातर छोटे सीमित क्षेत्र पर ध्यान केन्द्रित किया जाता है।
* **उद्देश्य** : समुदायों द्वारा संरक्षित क्षेत्र ज़्यादातर शाश्वत आजीविकाओं के लिये संरक्षित किये जाते हैं।
* **लाभ** : समुदायों द्वारा संरक्षित क्षेत्रों से समुदाय को ज़्यादा मछलियों के कारण अधिक आमदनी होती है।
* **प्रभाव** : घटनाओं के विवरणद्वारा मिलनेवाले सबूतों और वैज्ञानिक सबूतों से लगता है कि समुदायों द्वारा संरक्षित क्षेत्रों में कुछ प्रजातियों में तेज़ी से वृद्धि हुई है और जैव–विविधता को भी लाभ मिला हैं।
* **सहायक संघ** : समुदायों द्वारा संरक्षित ज्यादातर क्षेत्र सहायता देनेवाले संघों के सदस्य होते हैं, जिनके ज़रिए समुदायों द्वारा संरक्षित हर क्षेत्र को सरकार से या NGOs से सलाह के रुप में या आर्थिक रुप में सहायता मिलती रहती है।
* **कानूनी सहायता** : समुदायों द्वारा संरक्षित ज्यादातर क्षेत्रों को कानूनी सहायता नहीं मिल पाती है, पर इसकी आवश्यकता भी नहीं पड़ती है क्योंकि पारंपरिक स्वामित्व अधिकार ही पर्याप्त साबित होते हैं। समुदायों द्वारा संरक्षित क्षेत्रों की मान्यता किसी सरकारी रणनीति पर आधारित नहीं, बल्कि समुदायों की व्यावहारिक सफलता पर आधारित है।

दक्षिण प्रशांत महासागर में स्थित पौलिनेशिआ के रारोटोंगा द्वीपों पर अरोको–मुरी समुदाय की पाबंदियाँ

सैंकड़ो सालों से कुक द्वीपों में संसाधनों के व्यवस्थापन के लिये स्थानीय पाबंदी लगाने की परंपरा है। कभी किसी क्षेत्र में लोगों के जाने पर पाबंदी लगाई जा सकती है, तो किसी अन्य क्षेत्र में ख़ास संसाधनों पर। कभी निर्धारित समय के लिये पाबंदी लगाई जा सकती है, तो कभी हमेशा के लिये (इस प्रकार की पाबंदियाँ कम पाई जाती हैं)। कुक द्वीप समूह के अन्य द्वीपों पर अब भी पाबंदियाँ लगी रहती हैं, जब कि प्रमुख और अधिक विकसित हुए रारोटोंगा द्वीप पर १९७० के बाद यह कम पायी जाने लगी हैं। सन २००० के कुछ साल पहले पारंपरिक प्रमुखों की सभा में पाबंदियाँ लगाने को प्रोत्साहन दिया गया, और फिर ख़ाड़ी के ६ क्षेत्रों में इन का पुनरुज्जीवन हुआ। अरोको–मुरी पाबंदी क्षेत्र इन में सब से बड़ा है। इस का कुल क्षेत्र तो कम–ज़्यादा होता रहा है, लेकिन यह आज भी एक संरक्षित क्षेत्र के रूप में मौजूद है।

अवाना–मुरी खाड़ी का हवाई दृष्य
(श्रेय : एवन स्मिथ)

दक्षिणी प्रशांत महासागर के प्रदेश में समुदायों द्वारा संरक्षित क्षेत्रों की संख्या बढ़ रही है और ऐसी हर पहल के लिये सरकार सहायता देने लगी हैं। परन्तु इन क्षेत्रों की सफलता ही उनके लिये ख़तरा पैदा कर सकती है। बड़े पैमाने पर पूंजी निवेश किया जाने के कारण और संस्थानीकरण के कारण उनकी आत्मनिर्भरता घटती जा रही है और वे दुर्बल बनते जा रहे हैं।

इस प्रदेश में क्षेत्रों के पुनरुज्जीवन की बात दुनिया की असाधारण घटना है। अनेक गाँव, समुदाय, जनजातियाँ, कुल और ज़िले पारंपरिक तरीकों पर आधारित स्थानीय व्यवस्थापन पद्धति इस्तेमाल कर के क्षेत्रों को सुरक्षित रख रहे हैं । अब वैज्ञानिकों, नीतिज्ञों, सरकारों और NGOs को अलग अलग संरक्षित क्षेत्रों तक विचारों को सीमित न रखते हुए ऐसे अनेक क्षेत्रों की नीव पर संपूर्ण द्वीप के लिये एक समन्वित व्यवस्थापन व्यवस्था के ज़रिये प्रादेशिक जैव–विविधता को बनाए रखने की, और लोगों की आजीविकाओं को शाश्वत बनाने की ओर ध्यान देना चाहिये।

नोट: "Community Conserved Areas: A review of status & needs in Melanesia and Polynesia" इस रिपोर्ट के कुछ अंश प्रमुख रिपोर्टकर्ता ह्यू गोवन (Hugh Gowan – hgovan@gmail.com) की अनुमति से यहाँ छपे हैं। संपूर्ण रिपोर्ट को पढ़ने के लिये देखिये : http://www.sprep.org/att/IRC/eCOPIES/Pacific_Region/422.pdf.

जापान के 'सातो–उमी' याने कि पारम्परिक संरक्षित समुद्री क्षेत्र

एक सर्वेक्षण के अनुसार जापान में कम से कम १,१६१ ऐसे समुद्री क्षेत्र हैं जिन्हे पारम्परिक रुप से संरक्षित समुद्री क्षेत्र माना जाता है। इन में से १,०५५ क्षेत्रों में मछलियाँ पकड़ना मना है। और इन ५९९ संरक्षित समुद्री क्षेत्रों में से ३०% स्थानों में मछुआरों ने स्वयं सागरी संरक्षण के लिये समझौते किये हैं। सरकारी अधिकारियों का कहना है कि वहाँ मछलियों के संरक्षण के लिये खुद के बनाये नियमों का अनुपालन अच्छी तरह किया जाता है। मनाही करनेवाले नियमों का अनुपालन किये जाने का कारण है स्थानीय निवासियों की शासन व्यवस्था, जिसके अनुसार :

१. मछलियाँ पकड़ने पर पाबंदी लगानेवाले मछुआरों के सहकारी संघ के सदस्य, जो एक–दूसरों के पड़ोसी हैं, एक–दूसरे की गतिविधियों पर कम खर्चे में नज़र रख पाते हैं। यह एक आर्थिक महत्व की बात है। स्थानीय सामाजिक और आर्थिक परिस्थिति को भी ध्यान में रखा जाता है।

२. जापान में स्वयंप्रेरित सामुदायिक तटीय मछली व्यवस्थापन पिछले २५० सालों से प्रचलित है। लिहाज़ा ऐसी पाबंदियाँ अब संस्कृति का एक भाग बन चुकी हैं।

जापान के सातो – उमी जैसी स्वयंप्रेरित पाबंदी लगानेवाले संरक्षित क्षेत्र अन्य देशों में बनाना मुश्किल हो सकता है, क्योंकि इसके लिये मछुआरों को प्रादेशिक अधिकारों की सरकारी **गारंटी** होना आवश्यक है। यह आम तौर पर अन्य देशों में नहीं पाई जाती है। लाभ–धारकों के अलावा अन्य व्यक्तियों को संरक्षित क्षेत्र में प्रवेश करने से रोका जायेगा, तभी ऐसी संरक्षण पद्धति सफल हो पायेगी।

नोट: ज़्यादा जानकारी के लिये संदर्भ: Yagi N, et al. Marine protected areas in Japan: Institutional background and management framework. Marine Policy (2010).

फ़िलिपीन्स का कोरौन द्वीप

फ़िलिपीन्स देश के तागबान्वा जनजाति के लोग, चूने के पत्थर से बने जिस शानदार द्वीप पर रहते हैं, उस पर मनुष्य के हर व्यवहार के लिये नियम बनाये गये है। जंगल से मिलनेवाले संसाधनों का केवल घरेलू ज़रूरतों को पूरा करने के लिये इस्तेमाल किया जा सकता है। मीठे पानीवाली सारी झीलें (एक को छोड़कर) पूजनीय मानी गई हैं, और धार्मिक और सांस्कृतिक प्रयोजन के बिना वहाँ जाना मना है। पर्यटन के लिये केवल एक 'कायांगन झील' ही उपलब्ध है, और वहाँ भी कूड़ा–कचरा व्यवस्थापन के, और संसाधनों का उपयोग करने, वगैरह के बारे में कड़े नियम बनाये गये हैं। तागबान्वा समुदाय को हाल ही में अपने क्षेत्र पर प्रादेशिक व सामुदायिक अधिकार मिले है। उसके पहले अन्य मछुआरे, पर्यटन व्यावसायिक, ज़मीन की लेन–देन की तलाश करनेवाले राजकीय नेता और सरकारी एजन्सियाँ यहाँ घुस जाती थी। इसके कारण कई समस्याएँ पैदा हुई, जैसे की रोज़ी–रोटी के लिये आवश्यक मछलियों, व अन्य समुद्री संसाधनों का नष्ट होना।

१९८० के दशक में सारे समुदाय ने मिलकर एक संगठन (कोरौन द्वीप का तागबान्वा संस्थान) बनाकर समुदाय द्वारा जंगल की रक्षा करने का समझौता बनाने के लिये आवेदन पत्र दर्ज किया।

१९९० में उन्हे ७,७४८ एकड़ के क्षेत्र (जिस में कोरौन द्वीप और उसके नज़दीक का ड़ेलियन द्वीप शामिल थे) पर समझौते के अनुसार अधिकार दिये गये। परंतु यह अधिकार समुद्री क्षेत्र पर नहीं दिये गये। १९९८ में समुदाय २२,२८४ एकड़ क्षेत्र पर अधिकार पाने में सफ़ल रहा। इस क्षेत्र में जल और स्थल दोनों का समावेश था। परिक्षेत्र के उत्तम नक्षे और बाप–दादाओं से उपलब्ध हुई क्षेत्र व्यवस्थापन योजना का इस्तेमाल करने के कारण उन्हें भू क्षेत्र पर सामुदायिक अधिकार मिल पाया। क्षेत्र के सफल

सामुदायिक व्यवस्थापन के बावजूद भी २००१ में सरकार द्वारा उनके अधिकारों की समीक्षा की गई, क्योंकि राष्ट्रीय स्तर पर नीति और व्यवस्थाओं का पुनर्गठन किया जा रहा था। सरकार ने कोरौन द्वीप को एक राष्ट्रीय उद्यान घोषित करने का प्रस्ताव रखा। तागबान्वा समुदाय को अब यह ड़र है कि राष्ट्रीय उद्यान बनने के बाद कहीं वे अपने नैसर्गिक संसाधनों पर नियंत्रण खो न बैठें और अपनी भूमि के स्वामी और संरक्षक होने के बजाय वे व्यवस्थापक समूह का सिर्फ़ एक हिस्सा न बना दिये जायें।

नोट: अधिक जानकारी के लिये संदर्भ : "Mapping the Ancestral Lands and Waters of the Calamian Tagbanwa of Coron, Nothern Palawan" (http://www.iapad.org/publications/ppgis/coron best practices.pdf.).

इस पत्रिका को पढ़नेवालों के लिये नोट

आशा है कि **समुदाय व संरक्षण** पत्रिका के इस अंक को आप ने पसंद किया होगा। इसी अंक के साथ हम ने एक नया विभाग – संपादक को पत्र – शुरू किया है। आप की राय का, और सुझावों का हमें इंतज़ार है। अंक को अधिक उपयुक्त कैसे बनाया जाए, यह ज़रूर लिखें। अगर आप ने भी इस विषय में कुछ अनुभव गठित किये हैं, या कुछ घटनाओं के बारे में जानकारी/प्रतिक्रिया पायी है, तो उसे (कुल १५० शब्दों में) लिखकर आवश्य भेजें। उन्हे इस पत्रिका में छपवाने में हमें खुषी होगी। हिंदी मे प्रतिक्रिया हो तो कृपया उन्हे PDF फ़ाइल बनाकर ई–मेल के साथ जोड़कर यहाँ भेजें : kvoutreach@gmail.com/milindwani@yahoo.com. ई–मेल का विषय (subject) हो : "For Samudaya va Samrakshana" (''समुदाय व संरक्षण'' के लिये) अपने सुझाव/लेख को आप ड़ाक से भी भेज सकते हैं। पता है,

मिलिन्द वाणी
कल्पवृक्ष
ड़ौक्युमेंटेशन एवं आउट–रीच केंद्र
५, श्री दत्त कृपा, ९०८ ड़ेक्कन जिमखाना,
पुणे, महाराष्ट्र 411 004
वेबसाइट : www.kalpavriksh.org

संपादक को लिखे गये पत्र

अरावली संस्था से शुभकामनाएँ।

समुदाय एवं संरक्षण वार्तापत्र पा कर खुषी हुई। यह पत्रिका आवश्यक जानकारी देती है। आजीविका विषयक कार्य में मिले अनुभवों का कथन, जो इसमें शामिल किया गया है, वह भी आवश्यकता को पूर्ण करता है। अरावली को भविष्य में भी आप का साथ मिलता रहेगा।

अनिल जैन
अरावली, पटेल भवन
HCM-RIPA, जवाहरलाल नेहरू मार्ग
जयपूर 302 017

जैव–विविधता विरासत स्थलों के चयन और व्यवस्थापन के लिये कल्पवृक्ष ने प्रकाशित किये हुए मार्गदर्शक तत्व भेजने के लिये शुक्रिया। यह दिलचस्प हैं और बहुत जानकारी भी देते हैं।

कृतज्ञ
जोऍना वैन ग्रूसेन
(ईमेल के ज़रिये)

पाकिस्तान में मार्खोर की शिकार के बारे में लिखे गये लेख को आप की पत्रिका में पढ़कर खुशी के साथ आश्चर्य भी हुआ। वन्य प्राणियों के आवासों को व्यापारी व्यवस्था से बचाने के लिये बनाई गई ज़िंबाब्वे की कैम्पफ़ायर (CAMPFIRE) जैसी योजनाओं की आलोचना करने का समर्थन मैं कई सालों से कर रहा हूँ। आप की संस्था में मेरे कुछ लेख रिकॉर्ड़ पर हैं। जिन लोगों को शिकार से जुड़ी संरक्षण योजनाओं की सफलता पर संदेह था, उन को मैं हमेशा WWF/IUCN की मार्खोर शिकार योजना (पाकिस्तान में) और जंगली भेड़ों की शिकार की योजना (नेपाल में) के मसले देता हूँ। भारत में छपी पर्यावरण विषयक पत्रिका में इस मसले के बारे में पढ़कर खुषी हुई। अरण्यवासी समुदाय, अपने नये अधिकारों के जरिये अपने जंगलों कें वन्य प्राणियों को सुरक्षित रखने में भविष्य में शायद सफल हो सकते हैं। यह नोट किया जाये कि मैं WWF कोल्हापूर का १० सालों तक मानद सचिव रह चुका हूँ। इस विषय पर मेरा एक लेख भी आप को भेज रहा हूँ, जिसे पढ़ने में आप के पाकिस्तान स्थित सहयोगी को शायद दिलचस्पी होगी।

कर्णसिंह घोरपड़े
कोल्हापूर
(ईमेल के ज़रिये)

कल्पवृक्ष की नयी किताब

शीर्षक : जारावा जनजाति आरक्षित क्षेत्र की फ़ाइल (ड़ौसिए): अंड़मान द्वीपों की सांस्कृतिक और जैविक विविधता

संपादन : पंकज सेखसरिया और विश्वजीत पंड़्या

निर्मिति : इस किताब को UNESCO के 'लोकल ऐण्ड़ इण्ड़िजिनस नौलेज सिस्टिम्स (LINKS)' प्रोग्राम के अंतर्गत कल्पवृक्ष ने निर्माण किया है।

पन्ने : २१२, १२ कलर प्लेट्स, ११ रंगीन नक्षे।

इस किताब में १० लेख (मूल या पूर्व-प्रकाशित) और व्यापक कागज़ात शामिल किये गये हैं। १९५६ में बनाये गये अंड़मान और निकोबार आदिम जनजातियों के संरक्षण के बारे में विनियमन (Regulations) का इस में समावेश है; कोलकता उच्च न्यायालय ने स्वीकार की हुई जारावा जनजाति विषयक नीति (Policy) का, और अंड़मान आदिम जनजाति विकस समिति (AAJVS) के नियमों (Rules) का भी समावेश है, और जारावा समुदाय से हुई संघर्ष की घटनाओं की सूचि का भी समावेश है।

किताब में ११ रंगीन नक्षे भी हैं, जिन से जारावा आरक्षित क्षेत्र की सीमाओं में आये बदलावों, और पेड़-पौधों की प्रजातियों में और उनकी संख्या में आये बदलावों की विस्तृत जानकारी मिलती है। इस आरक्षित क्षेत्र के भूमि-आवरण का वर्गीकरण (land cover classification) क्या है, जंगलों में जारावा लोगों की छावनियाँ कहाँ पर मौजूद हैं, यह भी हम जान सकते हैं।

पंकज सेखसरिया के साथ संपर्क करने के लिये संपादकीय पते पर लिखिये, या फिर ईमेल कीजिये : psekhsaria@gmail.com

इस किताब की PDF फ़ाइल को आप ड़ाउनलोड़ भी कर सकते हैं : http://unesdoc.unesco.org/ images/0018/001876/187690E.pdf.

इस किताब को, तथा कल्पवृक्ष की अन्य किताबों को पाने के लिये हमारी पब्लिकेशन्स प्रमुख सुनीति कुलकर्णी को kvbooks@gmail.com पर लिखिये।

समुदाय व संरक्षण : समुदाय आधारित जैवविविधता संरक्षण तथा आजीविका सुरक्षा – समुद्री व तटीय क्षेत्रों पर विशेषांक

अंक ३, नं. २, ऑगस्ट २०१०
संपादक : मिलिन्द वाणी
परामर्श व भाषा संपादन : नीमा पाठक
संपादकीय सहयोग और अनुवाद : अनुराधा अर्जुनवाड़कर
मुखपृष्ठ फोटो : अशिष कोठारी, फ़िलिपीन्स देश के द्वीपों में से समुदाय द्वारा संरक्षित कोरौन द्वीप का एक आदिवासी, तागबान्वा जनजाति का व्यक्ति
अन्य तस्वीरें : एवन स्मिथ
चित्रांकन : मधुवंती अनंतराजन, राम चंद्रन
प्रकाशक : कल्पवृक्ष, अपार्टमेंट ५ श्री दत्त कृपा, ९०८ ड़ेक्कन जिमखाना, पुणे 411 004
फोन : 91-20-25675450 फोन/फॅक्स : 91-20-25654239 ईमेल : kvoutreach@gmail.com
वेबसाइट : www.kalpavriksh.org
आर्थिक सहयोग : मिज़ेरिओर

निजी वितरण के लिये

प्रकाशित विषयवस्तु (Printed matter)

सेवा में,